विषय

9

औद्योगिक क्रांति

*वहाँ दूसरी औद्योगिक क्रांति लगभग 1850 के बाद आई और उसमें रसायन तथा बिजली जैसे नए औद्योगिक क्षेत्रों का विस्तार हुआ। उस दौरान, ब्रिटेन जो पहले विश्व-भर में औद्योगिक शक्ति के रूप में अग्रणी था, पिछड़ गया और जर्मनी तथा संयुक्त राज्य अमरीका उससे आगे निकल गए।

ब्रिटेन में, 1780 के दशक और 1850 के दशक के बीच उद्योग और अर्थव्यवस्था का जो रूपांतरण हुआ उसे 'प्रथम औद्योगिक क्रांति के नाम से पुकारा जाता है।' इस क्रांति के ब्रिटेन में दूरगामी प्रभाव हुए। बाद में, यूरोप के देशों और संयुक्त राज्य अमरीका में ऐसे ही परिवर्तन हुए और उन परिवर्तनों का उन देशों तथा शेष विश्व के समाज और अर्थव्यवस्था पर भी काफी प्रभाव पड़ा।*

ब्रिटेन में औद्योगिक विकास का यह चरण नयी मशीनों और तकनीकियों से गहराई से जुड़ा है। इन मशीनों तथा तकनीकों ने पहले की हस्तशिल्प और हथकरघा उद्योगों की तुलना में भारी पैमाने पर माल के उत्पादन को संभव बनाया। इस अध्याय में कपास और लोहा उद्योगों में हुए परिवर्तनों की रूपरेखा दी गई है। ब्रिटेन के उद्योगों में शक्ति के एक नए स्रोत के रूप में भाप का व्यापक रूप से प्रयोग होने लगा। इसके प्रयोग से जहाज़ों और रेलगाड़ियों द्वारा परिवहन की गति अधिक तेज़ हो गई। जिन आविष्कर्ताओं तथा व्यापारियों ने ये परिवर्तन लाने में योगदान दिया था उनमें से बहुत से लोग व्यक्तिगत रूप से न तो धनवान थे और न ही वे बुनियादी विज्ञानों, जैसे भौतिकी अथवा रसायन में शिक्षित थे, जैसाकि उनमें से कुछ वैज्ञानिकों की पृष्ठभूमि पर नज़र डालने से पता चलेगा।

आगे चलकर औद्योगीकरण की वजह से कुछ लोग तो समृद्ध हो गए, पर इसके प्रारंभिक दौर को लाखों लोगों के काम करने की खराब एवं बदतर रहन-सहन की परिस्थितियों से जोड़ा जाता है। इनमें स्त्रियाँ और बच्चे भी शामिल थे। इससे विरोध भड़क उठा फलस्वरूप सरकार को कार्य करने की परिस्थितियों के नियंत्रण के लिए कानून बनाने पड़े।

'औद्योगिक क्रांति' शब्द का प्रयोग यूरोपीय विद्वानों जैसे फ्रांस में जॉर्जिस मिशले (Georges Michelet) और जर्मनी में फ्रॉइड्रिक एंजेल्स (Friedrich Engels) द्वारा किया गया। अंग्रेज़ी में इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम दार्शनिक एवं अर्थशास्त्री ऑरनॉल्ड टॉयनबी (Arnold Toynbee,1852-83) द्वारा उन परिवर्तनों का वर्णन करने के लिए किया गया जो ब्रिटेन के औद्योगिक विकास में 1760 और 1820 के बीच हुए थे। इस दौरान ब्रिटेन में जॉर्ज तृतीय का शासन था, जिसके बारे में टॉयनबी ने ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में कई व्याख्यान दिए थे। उनके व्याख्यान उनकी असामयिक मृत्यु के बाद, 1884 में एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुए जिसका नाम था *लेक्चर्स ऑन दि इंडस्ट्रियल रिवोल्यूशन इन इंग्लैंड : पॉपुलर एड्रसेज़, नोट्स एंड अदर फ्रैग्मेंट्स* (इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति पर व्याख्यान: लोकप्रिय अभिभाषण, टिप्पणियाँ और अन्य अंश)।

परवर्ती इतिहासकार टी.एस.एश्टन (T.S. Ashton), पॉल मंतू (Paul Mantoux) और एरिक हॉब्सबाम (Eric Hobsbawm) मोटे तौर पर टॉयनबी के विचारों से सहमत थे। 1780 के दशक से 1820 के दौरान कपास और लौह उद्योगों, कोयला खनन, सड़कों और नहरों के निर्माण और विदेशी व्यापार में उल्लेखनीय आर्थिक प्रगति हुई। एश्टन (1889-1968) ने तो इस औद्योगिक क्रांति का उत्सव मनाया, जब इंग्लैंड छोटी-छोटी मशीनों और कल-पुर्जों की बाढ़ से मानो आप्लावित हो गया।

ब्रिटेन क्यों?

ब्रिटेन पहला देश था जिसने सर्वप्रथम आधुनिक औद्योगीकरण का अनुभव किया था। यह सत्रहवीं शताब्दी से राजनीतिक दृष्टि से सुदृढ़ एवं संतुलित रहा था और इसके तीनों हिस्सों – इंग्लैंड, वेल्स और स्कॉटलैंड – पर एक ही राजतंत्र यानी सम्राट का एकछत्र शासन रहा था। इसका अर्थ यह हुआ कि संपूर्ण राज्य में एक ही कानून व्यवस्था, एक ही सिक्का (मुद्रा-प्रणाली) और एक ही बाज़ार व्यवस्था थी। इस बाज़ार व्यवस्था में स्थानीय प्राधिकरणों का कोई हस्तक्षेप नहीं था, यानी वे अपने इलाके से होकर गुजरने वाले माल पर कोई कर नहीं लगा सकते थे जिससे कि उसकी कीमत बढ़ जाती। सत्रहवीं शताब्दी के अंत तक आते-आते, मुद्रा का प्रयोग विनिमय यानी आदान-प्रदान के माध्यम के रूप में व्यापक रूप से होने लगा था। तब तक बहुत से लोग अपनी कमाई, वस्तुओं की बजाय मज़दूरी और वेतन के रूप में पाने लगे। इससे लोगों को अपनी आमदनी से खर्च करने के लिए अधिक विकल्प प्राप्त हो गए और वस्तुओं की बिक्री के लिए बाज़ार का विस्तार हो गया।

अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैंड एक बड़े आर्थिक परिवर्तन के दौर से गुज़रा था, जिसे बाद में 'कृषि-क्रांति' कहा गया है। यह एक ऐसी प्रक्रिया थी जिसके द्वारा बड़े ज़मींदारों ने अपनी ही संपत्तियों के आसपास छोटे-छोटे खेत (फार्म) खरीद लिए और गाँव की सार्वजनिक ज़मीनों को घेर लिया; इस प्रकार उन्होंने अपनी बड़ी-बड़ी भू-संपदाएँ बना लीं जिससे खाद्य उत्पादन की वृद्धि हुई। इससे भूमिहीन किसानों और गाँव की सार्वजनिक ज़मीनों पर अपने पशु चराने वाले चरवाहों एवं पशुपालकों को कहीं और काम-धंधा तलाशने के लिए मजबूर होना पड़ा। उनमें से अधिकांश लोग आसपास के शहरों में चले गए।

अंग्रेज़ी के सुप्रसिद्ध लेखक ओलिवर गोल्डस्मिथ (Oliver Goldsmith, 1728-74) ने अपनी कविता 'उजड़ा गाँव' (दि डेज़र्टेड विलेज़) में इस स्थिति का चित्रण किया है। कुछ पंक्तियाँ देखिए:

"वो इनसान जो अपने धन और अहंकार से पनप रहा है।
उस ज़मीन के लिए
गरीबों ने अपना सब कुछ हारा है;

वो ज़मीन जहाँ उसकी झील बनी है
वो ज़मीन जहाँ उसके बगीचे के आगे
चारों ओर फैली हुई है
उस जगह जहाँ उसके घोड़े बँधते हैं
और वहाँ जहाँ घोड़ों के साज़ो-सामान रखे जाते हैं
और वहीं जहाँ उनके कुत्ते रहा करते हैं;

वो रेशमी आलस्य जिसमें उसके अंग ढके हैं
न जाने कितने पड़ोसी खेतों की
आधी से ज़्यादा, उपजों को छीना है।"

शहर, व्यापार और वित्त

अठारहवीं शताब्दी से, यूरोप के बहुत-से शहर क्षेत्रफल और आबादी दोनों ही दृष्टियों से बढ़ने लगे थे। यूरोप के जिन उन्नीस शहरों की आबादी सन् 1750 से 1800 के बीच दोगुनी हो गई थी, उनमें से ग्यारह ब्रिटेन में थे। इन ग्यारह शहरों में लंदन सबसे बड़ा था जो देश के बाज़ारों का केंद्र था; बाकी बड़े-बड़े शहर भी लंदन के आस-पास ही स्थित थे।

लंदन ने संपूर्ण विश्व में भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था। अठारहवीं शताब्दी तक आते-आते भूमंडलीय व्यापार का केंद्र, इटली तथा फ्रांस के भूमध्यसागरीय पत्तनों (बंदरगाह) से हटकर, हॉलैंड और ब्रिटेन के अटलांटिक पत्तनों पर आ गया था। इसके बाद तो लंदन ने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए ऋण प्राप्ति के प्रधान स्रोत के रूप में ऐम्सटर्डम का स्थान ले लिया। साथ ही, लंदन, इंग्लैंड, अफ़्रीका और वेस्टइंडीज के बीच स्थापित त्रिकोणीय व्यापार का केंद्र भी बन गया। अमरीका और एशिया में व्यापार करने वाली कंपनियों के कार्यालय भी लंदन में थे। इंग्लैंड में विभिन्न बाज़ारों के बीच माल की आवाजाही प्रमुख रूप से नदी मार्ग से और समुद्री तट की सुरक्षित खाड़ियों में पानी के जहाज़ों से होती थी। रेलमार्ग का प्रसार होने तक, जलमार्गों द्वारा परिवहन स्थलमार्गों की तुलना में सस्ता पड़ता था और उसमें समय भी कम लगता था। काफी पहले यहाँ तक कि सन् 1724 से इंग्लैंड के पास नदियों के ज़रिये लगभग 1,160 मील लंबा जलमार्ग था जिसमें नौकाएँ चल सकती थीं और पहाड़ी इलाकों को छोड़कर, देश के अधिकांश स्थान नदी से अधिक से अधिक 15 मील की दूरी पर थे। चूंकि इंग्लैंड की नदियों के सभी नौचालनीय भाग समुद्र से जुड़े हुए

थे, इसलिए नदी पोतों के ज़रिये ढोया जाने वाला माल समुद्रतटीय जहाज़ों तक जिन्हें 'तटपोत' (Coasters) कहा जाता था, आसानी से ले जाया और सौंपा जा सकता था। सन् 1800 तक इन कोस्टर तटपोतों पर काम करने वाले नाविकों की संख्या 100,000 तक पहुँच गई थी।

देश की वित्तीय प्रणाली का केंद्र बैंक ऑफ इंग्लैंड (1694 में स्थापित) था। 1784 तक, इंग्लैंड में कुल मिलाकर एक सौ से अधिक प्राँतीय बैंक थे और अगले दस वर्षों में इनकी संख्या बढ़कर तीन गुना हो गई थी। 1820 के दशक तक, प्राँतों में 600 से अधिक बैंक थे और अकेले लंदन में ही 100 से अधिक बैंक थे। बड़े-बड़े औद्योगिक उद्यम स्थापित करने ओर चलाने के लिए आवश्यक वित्तीय साधन इन्हीं बैंकों द्वारा उपलब्ध कराए जाते थे।

क्रियाकलाप 1

अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैंड और विश्व के अन्य भागों में हुए उन परिवर्तनों एवं विकासक्रमों पर चर्चा कीजिए जिनसे ब्रिटेन में औद्योगीकरण को प्रोत्साहन मिला।

1780 के दशक से 1850 के दशक तक ब्रिटेन में जो औद्योगीकरण हुआ, उसके कुछ कारण ऊपर बताए जा चुके हैं – गाँवों से आए अनेक गरीब लोग नगरों में काम करने के लिए उपलब्ध हो गए, बड़े-बड़े उद्योग-धंधे स्थापित करने के लिए आवश्यक ऋण-राशि उपलब्ध कराने के लिए बैंक मौजूद थे, और परिवहन के लिए एक अच्छी व्यवस्था उपलब्ध थी।

आगे के पृष्ठों में दो नए कारकों का वर्णन किया गया है: प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों की शृंखला, जिसने उत्पादन के स्तरों में अचानक वृद्धि कर दी और एक नया परिवहन तंत्र जो रेल मार्गों के निर्माण से तैयार हो गया। इन दोनों विकासक्रमों के मामले में, यदि बीच के समय को सावधानीपूर्वक देखा जाए तो यही पता चलेगा कि इन विकासक्रमों और उनके व्यापक इस्तेमाल के बीच कुछ दशकों का अंतराल रहा था। इसलिए कोई यह न समझे कि प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में कोई नया आविष्कार होते ही उद्योग में तत्काल उसका प्रयोग शुरू हो गया।

अठारहवीं शताब्दी में कुल मिलाकर जो 26,000 आविष्कार हुए उनमें से आधे से अधिक आविष्कार 1782 से 1800 तक की अवधि में ही हुए थे। इन आविष्कारों के कारण अनेक परिवर्तन हुए। हम इन परिवर्तनों में से केवल चार बड़े परिवर्तनों अर्थात् लौह उद्योग का रूपांतरण, कपास की कताई और बुनाई, भाप की 'शक्ति' का विकास और रेलमार्गों की शुरुआत पर ही चर्चा करेंगे।

कोयला और लोहा

इंग्लैंड इस मामले में सौभाग्यशाली था कि वहाँ मशीनीकरण में काम आने वाली मुख्य सामग्रियाँ, कोयला और लौह-अयस्क, बहुतायत से उपलब्ध थीं। इसके अलावा, वहाँ उद्योग में काम आने वाले अन्य खनिज; जैसे- सीसा, ताँबा और राँगा (टिन) भी खूब मिलते थे। किंतु, अठारहवीं शताब्दी तक, वहाँ *इस्तेमाल योग्य लोहे* की कमी थी। लोहा प्रगलन* (smelting) की प्रक्रिया के द्वारा लौह खनिज में से शुद्ध तरल-धातु के रूप में निकाला जाता है। सदियों तक, इस प्रगलन

कोलब्रुकडेल (Coalbrookdale) का चित्र: धमन भट्टियाँ (बाएँ और मध्य भाग में) और काठकोयले की भट्टियाँ (दाएँ) एफ़ व्राइवेर्स (F. Vivares) द्वारा की गई चित्रकारी 1758।
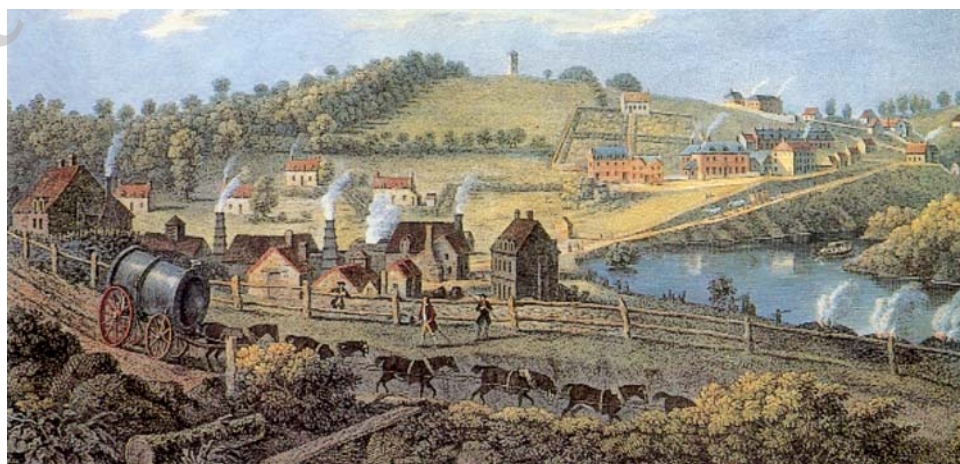
प्रक्रिया के लिए काठ कोयले (चारकोल) का प्रयोग किया जाता था। लेकिन इस कार्य की कई समस्याएँ थीं: काठकोयला लंबी दूरी तक ले जाने की प्रक्रिया में टूट जाया करता था; इसकी अशुद्धताओं के कारण घटिया किस्म के लोहे का ही उत्पादन होता था; यह पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध भी नहीं था क्योंकि लकड़ी के लिए जंगल काट लिए गए थे; और यह उच्च तापमान पैदा नहीं कर सकता था।

कोलब्रुकडेल के पास ढलवाँ लोहे का पुल। विलियम विलियम्स द्वारा चित्रकारी, 1780

इस समस्या का कई वर्षों से हल ढूँढ़ा जा रहा था अंततोगत्वा श्रोपशायर के एक डर्बी परिवार ने जो स्वयं लौह-उस्ताद थे, इस समस्या का हल निकाल लिया। आधी शताब्दी के दौरान, इस परिवार की तीन पीढ़ियों ने (दादा, पिता और पुत्र जो सभी अब्राहम डर्बी के नाम से पुकारे जाते थे) धातुकर्म उद्योग में क्रांति ला दी। इस क्रांति का प्रारंभ 1709 में प्रथम अब्राहम डर्बी (1677-1717) द्वारा किए गए आविष्कार से हुआ। यह धमनभट्टी (Blast furance) का आविष्कार था जिसमें सर्वप्रथम 'कोक' का इस्तेमाल किया गया। कोक में उच्चताप उत्पन्न करने की शक्ति थी और वह (पत्थर के) कोयले से, गंधक तथा अपद्रव्य निकालकर तैयार किया जाता था। इस आविष्कार का फल यह हुआ कि तब से भट्ठियों को काठकोयले पर निर्भर नहीं रहना पड़ा। इन भट्ठियों से जो पिघला हुआ लोहा निकलता था उससे पहले की अपेक्षा अधिक बढ़िया और लंबी ढलाई की जा सकती थी।

इस प्रक्रिया में कुछ और आविष्कारों द्वारा आगे और सुधार किया गया। द्वितीय डर्बी (1711-68) ने ढलवाँ लोहे (pig-iron) से पिटवाँ लोहे (wrought-iron) का विकास किया जो कम भंगुर था। हेनरी कोर्ट (1740-1823) ने आलोड़न भट्ठी (puddling furance), (जिसमें पिघले लोहे में से अशुद्धि को दूर किया जा सकता था), और बेलन मिल (रोलिंग मिल) का आविष्कार किया, जिसमें परिशोधित लोहे से छड़ें तैयार करने के लिए भाप की शक्ति का इस्तेमाल किया जाता था। अब लोहे से अनेकानेक उत्पाद बनाना संभव हो गया। चूंकि लोहे में टिकाऊपन अधिक था इसलिए इसे मशीनें और रोज़मर्रा की चीज़ें बनाने के लिए लकड़ी से बेहतर सामग्री माना जाने लगा। लकड़ी तो जल या कट-फट सकती थी, लेकिन लोहे के भौतिक और रासायनिक गुण-धर्म को नियंत्रित किया जा सकता था। 1770 के दशक में, जोन विल्किनसन (1728-1808) ने सर्वप्रथम लोहे की कुर्सियाँ, आसव तथा शराब की भट्ठियों के लिए टंकियाँ (vats) और लोहे की सभी आकारों की नलियाँ (पाइपें) बनाईं। 1779 में तृतीय डर्बी (1750-91) ने विश्व में पहला लोहे का पुल कोलब्रुकडेल में सेवर्न* नदी पर बनाया। विल्किनसन ने पानी की पाइपें (पेरिस को पानी की आपूर्ति के लिए 40 मील लंबी) पहली बार ढलवाँ लोहे से बनाई।

उसके बाद, लोहा उद्योग कुछ खास क्षेत्रों में कोयला खनन तथा लोहा प्रगलन की मिली-जुली इकाइयों के रूप में केंद्रित हो गया। यह ब्रिटेन का सौभाग्य ही था कि वहाँ एक ही द्रोणी-क्षेत्र (Basin) यहाँ तक कि एक ही पट्टियों में उत्तम कोटि का कोकिंग कोयला और उच्च-स्तर का लौह खनिज साथ-साथ पाया जाता था। ये द्रोणी-क्षेत्र पत्तनों के पास ही थे:

*आगे चलकर यह इलाका 'आइरनब्रिज' नामक गाँव के रूप में विकसित हो गया

मानचित्र 1: ब्रिटेन: लौह उद्योग।
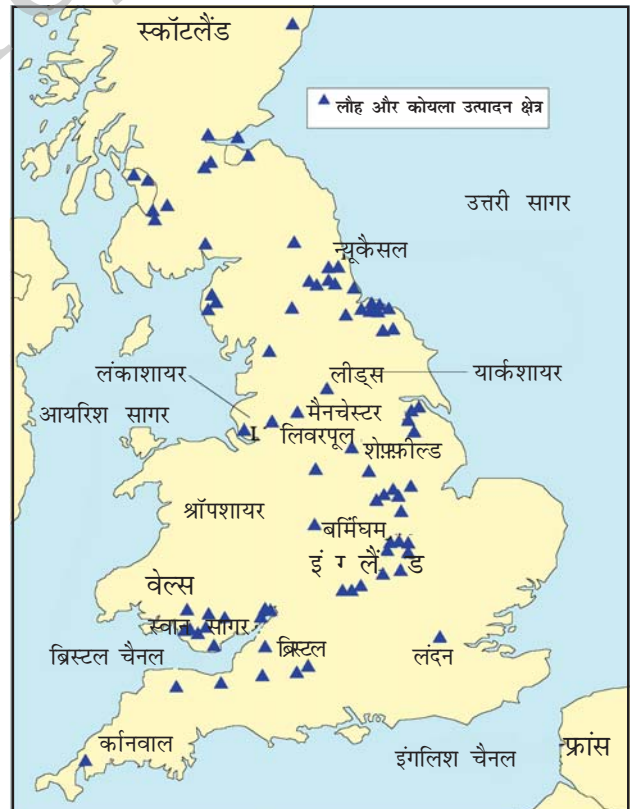
क्रियाकलाप 2

आइरनब्रिज गोर्ज आज एक प्रमुख विरासत स्थल है; क्या आप बता सकते हैं क्यों?

वहाँ ऐसे पाँच तटीय कोयला-क्षेत्र थे जो अपने उत्पादों को लगभग सीधे ही जहाज़ों में लदवा सकते थे। चूँकि कोयला-क्षेत्र समुद्र तट के पास ही थे इसलिए जहाज़-निर्माण का कारोबार और नौपरिवहन का व्यापार खूब बढ़ा।

ब्रिटेन के लौह उद्योग ने 1800 से 1830 के दौरान अपने उत्पादन को चौगुना बढ़ा लिया और उसका उत्पादन पूरे यूरोप में सबसे सस्ता था। 1820 में, एक टन ढलवाँ लोहा बनाने के लिए 8 टन कोयले की ज़रूरत होती थी, किंतु 1850 तक आते-आते यह मात्रा घट गई और केवल 2 टन कोयले से ही एक टन ढलवाँ लोहा बनाया जाने लगा। 1848 तक यह स्थिति आई कि ब्रिटेन द्वारा पिघलाए जाने वाले लोहे की मात्रा बाकी सारी दुनिया द्वारा कुल मिलाकर पिघलाए जाने वाले लोहे से अधिक थी।

कपास की कताई और बुनाई

ब्रिटिश हमेशा ऊन और सन (लिनन बनाने के लिए) से कपड़ा बुना करते थे। सत्रहवीं शताब्दी से इंग्लैंड भारत से बड़ी लागत पर सूती कपड़े की गांठों का आयात करता रहा था। लेकिन जब भारत के हिस्सों पर ईस्ट इंडिया कंपनी का राजनीतिक नियंत्रण स्थापित हो गया, तब इंग्लैंड ने कपड़े के साथ-साथ कच्चे कपास (रूई) का आयात करना भी शुरू कर दिया जिसकी इंग्लैंड में आने पर कताई की जाती थी और उससे कपड़ा बुना जाता था।

अठारहवीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में कताई का काम इतनी धीमी गति और मेहनत से किया जाता था कि एक बुनकर को व्यस्त रखने के लिए आवश्यक धागा कातने के लिए 10 कातने वालों, अधिकतर स्त्रियाँ, (स्पिनर जिनसे अंग्रेज़ी भाषा में प्रयुक्त शब्द 'स्पिंस्टर' बना है) की ज़रूरत पड़ती थी। इसलिए, कातने वाले दिनभर कताई के काम में लगे रहते थे और बुनकर बुनाई के लिए धागे के इंतज़ार में समय बर्बाद करते रहते थे। लेकिन प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अनेक आविष्कार हो जाने के बाद कच्ची रूई को कात कर उसका धागा बनाने और उससे कपड़ा बनाने की रफ़्तार के बीच पहले जो अंतर था वह खत्म करने में सफलता मिल गई। इस कार्य को और अधिक कुशलतापूर्वक करने के लिए उत्पादन का काम धीरे-धीरे, कताईगरों और बुनकरों के घरों से हटकर फैक्ट्रियों यानी कारखानों में चला गया।

चित्र में एक स्त्री को खतरनाक स्थिति में अपने पाँवों से ट्रेडमिल (पाँव-चक्की) चलाते हुए दिखाया गया है।
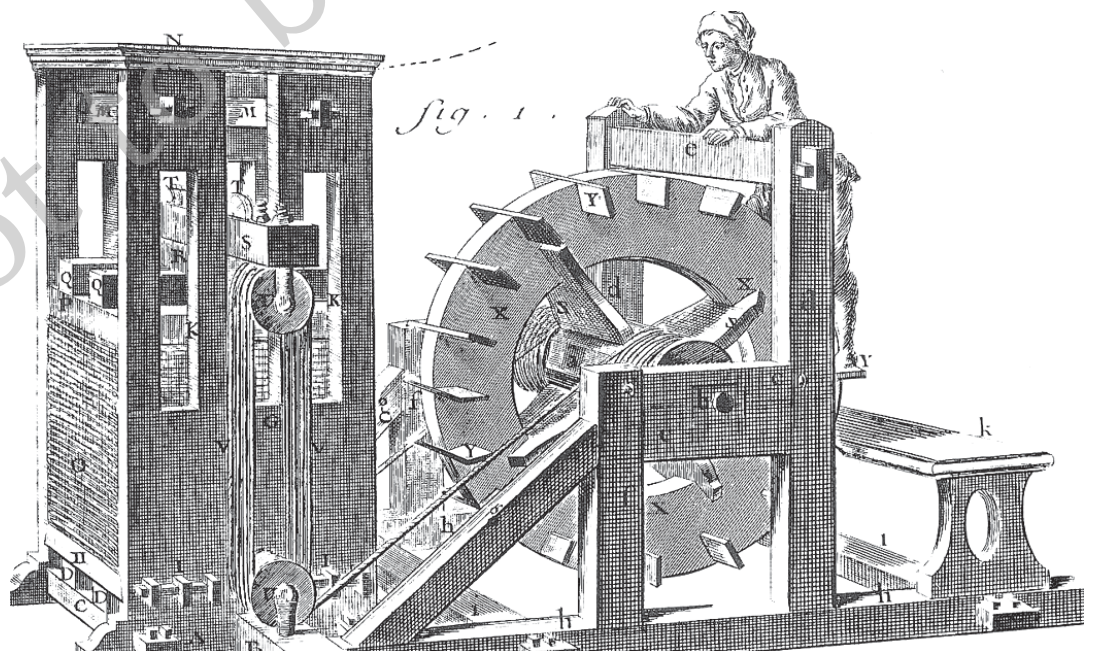
1. **उड़न तुरी करघे (Flying shuttle loom)** का आविष्कार जॉन के (1704-64) द्वारा 1733 में बनाए गए फ़्लाइंग शटल लूम यानी उड़न तुरी करघे की सहायता से कम समय में अधिक चौड़ा कपड़ा बनाना संभव हो गया। परिणामस्वरूप कताई की तत्कालीन रफ़्तार से जितना धागा बनता था उससे कहीं ज़्यादा मात्रा में धागे की ज़रूरत होने लगी।

2. जेम्स हरग्रीव्ज़ (1720-78) द्वारा 1765 में बनाई गई कताई मशीन **(Spinning jenny)** एक ऐसी मशीन थी जिसपर एक अकेला व्यक्ति एक साथ कई धागे कात सकता था। इससे बुनकरों को उनकी आवश्यकता से अधिक तेज़ी से धागा मिलने लगा।

3. रिचर्ड आर्कराइट (1732-92) द्वारा 1769 में आविष्कृत वॉटर फ़्रेम **(Water frame)** नाम की मशीन द्वारा पहले से कहीं अधिक मज़बूत धागा बनाया जाने लगा। इससे लिनन और सूती धागा दोनों को मिलाकर कपड़ा बनाने की बजाय अकेले सूती धागे से ही विशुद्ध सूती कपड़ा बनाया जाने लगा।

4. **'म्यूल'** एक ऐसी मशीन का उपनाम था जो 1779 में सैम्यूअल क्रॉम्प्टन (1753-1827) द्वारा बनाई गई थी। इससे कता हुआ धागा बहुत मज़बूत और बढ़िया होता था।

5. कपड़ा उद्योग में उन मशीनों के आविष्कारों का दौर, जो कताई तथा बुनाई कार्यों के बीच संतुलन बनाने के लिए बनाई जा रही थीं, एडमंड कार्टराइट (1743-1823) द्वारा 1787 में पॉवरलूम यानी शक्तिचालित करघे के आविष्कार के साथ समाप्त हो गया। पावरलूम को चलाना बहुत आसान था। जब भी धागा टूटता वह अपने आप काम करना बंद कर देता और इससे किसी भी तरह के धागे से बुनाई की जा सकती थी। 1830 के दशक से, कपड़ा उद्योग में नयी-नयी मशीनें बनाने की बजाय श्रमिकों की उत्पादकता बढ़ाने पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा।

मानचित्र 2: ब्रिटेन: सूती कपड़ा उद्योग

1780 के दशक से, कपास उद्योग कई रूपों में ब्रिटिश औद्योगीकरण का प्रतीक बन गया। इस उद्योग की दो प्रमुख विशेषताएँ थीं जो अन्य उद्योगों में भी दिखाई देती थीं।

कच्चे माल के रूप में आवश्यक कपास संपूर्ण रूप से आयात करना पड़ता था और जब उससे कपड़ा तैयार हो जाता तो उसका अधिकांश भाग बाहर निर्यात किया जाता था। इस संपूर्ण प्रक्रिया के लिए इंग्लैंड के पास अपने उपनिवेश होना ज़रूरी था जिससे कि इन उपनिवेशों से कच्ची कपास भरपूर मात्रा में मँगाई जा सके और फिर इंग्लैंड में उससे कपड़ा बनाकर उन्हीं उपनिवेशों के बाज़ारों में बेची जा सके।
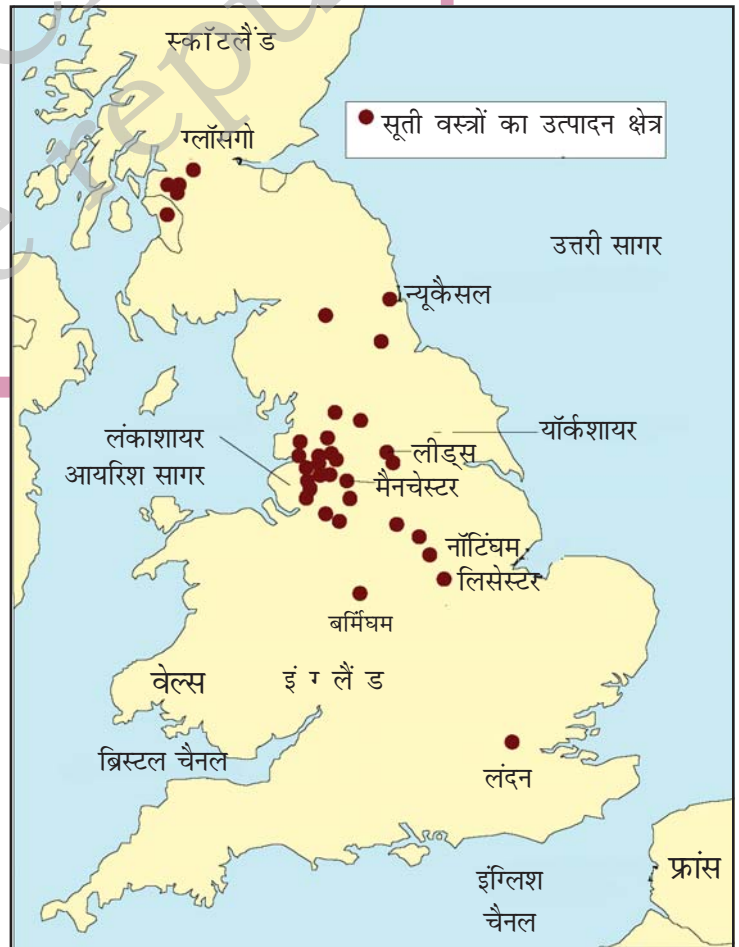
यह उद्योग प्रमुख रूप से कारखानों में काम करने वाली स्त्रियों तथा बच्चों पर बहुत ज़्यादा निर्भर था। इससे औद्योगीकरण के प्रारंभिक काल की घिनौनी तस्वीर सामने आती है, जिसका वर्णन आगे किया गया है।

वॉट के आविष्कार भाप के इंजन तक ही सीमित नहीं थे। उसने दस्तावेज़ों की नकल तैयार करने के लिए एक रासायनिक प्रक्रिया का भी आविष्कार किया था। उसने नापने की एक इकाई बनाई थी जो पुराने सर्वत्र शक्ति स्रोत 'घोड़े' की शक्ति के साथ यांत्रिक शक्ति की तुलना पर आधारित थी। वाट की माप इकाई यानी अश्वशक्ति (horse power) एक घोड़े की एक मिनट में एक फुट (0.3 मीटर) तक 33,000 पौंड (14,969 कि.ग्रा.) वज़न उठाने की क्षमता के समकक्ष थी। अश्वशक्ति को विश्व में सर्वत्र यांत्रिक ऊर्जा के सूचक के रूप में काम में लाया जाता है।

भाप की शक्ति

जब यह पता चल गया कि भाप अत्यधिक शक्ति उत्पन्न कर सकता है तो यह बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण के लिए निर्णायक सिद्ध हुआ। द्रवचालित शक्ति के रूप में जल भी सदियों से ऊर्जा का प्रमुख स्रोत बना रहा था; लेकिन इसका उपयोग कुछ खास इलाकों, मौसमों और चल प्रवाह की गति के अनुसार सीमित रूप में ही किया जाता था। लेकिन अब इसका एक अलग रूप में प्रयोग किया जाने लगा। भाप की शक्ति उच्च तापमानों पर दबाव पैदा करती जिससे अनेक प्रकार की मशीनें चलाई जा सकती थीं। इसका अर्थ यह हुआ कि भाप की शक्ति ऊर्जा का अकेला ऐसा स्रोत था जो मशीनरी बनाने के लिए भी भरोसेमंद और कम खर्चीला था।

भाप की शक्ति का इस्तेमाल सर्वप्रथम खनन उद्योगों में किया गया। जब कोयले और धातुओं की मांग बढ़ी तो उन्हें और भी अधिक गहरी खानों में से निकालने के प्रयासों में तेज़ी आई। खानों में अचानक पानी भर जाना भी एक गंभीर समस्या थी। थॉमस सेवरी (1650-1715) ने खानों से पानी बाहर निकालने के लिए 1698 में माइनर्स फ्रेंड (खनक-मित्र) नामक एक भाप के इंजन का मॉडल बनाया। ये इंजन छिछली गहराइयों में धीरे-धीरे काम करते थे, और अधिक दबाव हो जाने पर उनका वाष्पित्र (बॉयलर) फट जाता था।

भाप का एक और इंजन 1712 में थॉमस न्यूकॉमेन (1663-1729) द्वारा बनाया गया। इसमें सबसे बड़ी कमी यह थी कि संघनन बेलन (कंडेन्सिंग सिलिंडर) के लगातार ठंडा होते रहने से इसकी ऊर्जा खत्म होती रहती थी।

भाप के इंजन का इस्तेमाल 1769 तक केवल कोयले की खानों में ही होता रहा, जब जेम्सवाट (1736-1819) ने इसका एक और प्रयोग खोज निकाला। वाट ने एक ऐसी मशीन विकसित की जिससे भाप का इंजन केवल एक साधारण पंप की बजाय एक 'प्राइम मूवर' यानी प्रमुख चालक (मूवर) के रूप में काम देने लगा जिससे कारखानों में शक्तिचालित मशीनों को ऊर्जा मिलने लगी। एक धनी निर्माता मैथ्यू बॉल्टन (1728-1809) की सहायता से वॉट ने 1775 में बर्मिंघम में 'सोहो फाउंडरी' का निर्माण किया। इस फाउंडरी से वाट के स्टीम इंजन बराबर बढ़ती हुई संख्या में बनकर निकलने लगे। अठारहवीं शताब्दी के अंत तक वाट के भाप इंजन ने द्रवचालित शक्ति का स्थान लेना शुरू कर दिया था।

1800 के बाद, अधिक हलकी तथा मज़बूत धातुओं के इस्तेमाल से, अधिक सटीक मशीनी औज़ारों के निर्माण से और वैज्ञानिक जानकारी के अधिक व्यापक प्रसार से, भाप के इंजन की प्रौद्योगिकी और अधिक विकसित हो गई।

पहले धातु को पीसने के लिए चक्के चलाने का काम घोड़ों से लिया जाता था लेकिन बाद में भाप की शक्ति के इस्तेमाल से जनशक्ति तथा अश्वशक्ति पर मनुष्य की निर्भरता कम हो गई।
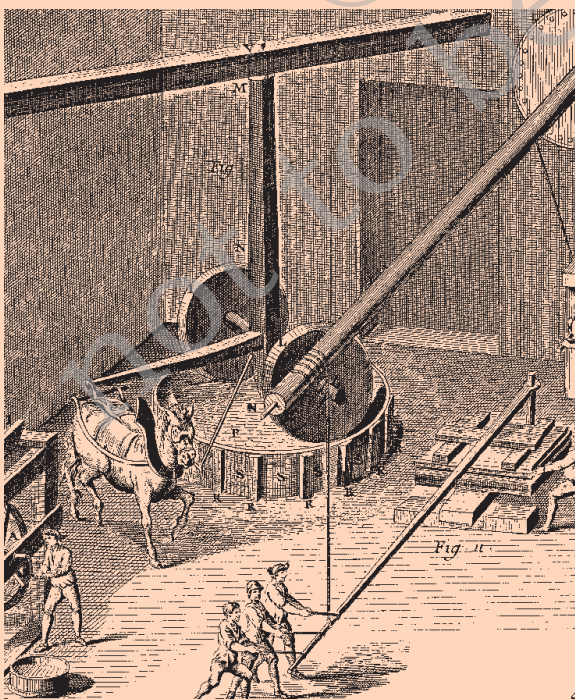
1840 में, स्थिति यह थी कि ब्रिटेन में बने भाप के इंजन ही संपूर्ण यूरोप में आवश्यक ऊर्जा की 70 प्रतिशत से अधिक अश्वशक्ति का उत्पादन कर रहे थे।

नहरें और रेलें

प्रारंभ में नहरें कोयले को शहरों तक ले जाने के लिए बनाई गईं। इसका कारण यह था कि कोयले को उसके परिमाण और भार के कारण सड़क मार्ग से ले जाने में समय बहुत लगता था और उस पर खर्च भी अधिक आता था जबकि उसे बजरों में भरकर नहरों के रास्ते ले जाने में समय और खर्च दोनों ही कम लगते थे। औद्योगिक ऊर्जा के लिए और शहरों में घर गर्म करने या उनमें रोशनी करने के लिए कोयले की माँग बराबर बढ़ती रही। इंग्लैंड में पहली नहर 'वर्सली कैनाल' 1761 में जेम्स ब्रिंडली (1716-72) द्वारा बनाई गई, जिसका प्रयोजन केवल यही था कि उसके ज़रिये वर्सले (मैनचेस्टर के पास) के कोयला भंडारों से शहर तक कोयला ले जाया जाए। इस नहर के बन जाने के बाद कोयले की कीमत घटकर आधी हो गई।

नहरें आमतौर पर बड़े-बड़े ज़मींदारों द्वारा अपनी ज़मीनों पर स्थित खानों, खदानों या जंगलों के मूल्य को बढ़ाने के लिए बनाई जाती थीं। नहरों के आपस में जुड़ जाने से नए-नए शहरों में बाज़ार बन गए। उदाहरण के लिए, बर्मिंघम शहर का विकास केवल इसीलिए तेज़ी से हुआ क्योंकि वह लंदन, ब्रिस्टल चैनल और मरसी तथा हंबर नदियों के साथ जुड़ने वाली नहर प्रणाली के मध्य में स्थित था। 1760 से 1790 के बीच, नहरें बनाने की पच्चीस नयी परियोजनाएँ शुरू की गईं। 1788 से 1796 तक की, 'नहरोन्माद' (Canal-mania) के नाम से पुकारे जाने वाली अवधि में 46 नयी परियोजनाएँ हाथ में ली गईं और उसके बाद अगले 60 वर्षों में अनेकानेक नहरें बनाई गईं जिनकी लंबाई कुल मिलाकर 4,000 मील से अधिक थी।

पहला भाप से चलने वाला रेल का इंजन-स्टीफेनसन का रॉकेट 1814 में बना। अब रेलगाड़ियाँ परिवहन का एक ऐसा नया साधन बन गईं, जो वर्षभर उपलब्ध रहती थीं, सस्ती और तेज़ भी थीं और माल तथा यात्री दोनों को ढो सकती थीं। इस साधन में एकसाथ दो आविष्कार सम्मिलित थे: लोहे की पटरी जिसने 1760 के दशक में लकड़ी की पटरी का स्थान ले लिया और भाप के इंजन द्वारा इस लोहे की पटरी पर रेल के डिब्बों की खिंचाई।

रेलवे के आविष्कार के साथ औद्योगीकरण की संपूर्ण प्रक्रिया ने दूसरे चरण में प्रवेश कर लिया। 1801 में, रिचर्ड ट्रेविथिक (1771-1833) ने एक इंजन का निर्माण किया जिसे 'पफ़िंग डेविल' यानी 'फुफकारने वाला दानव', कहते थे। यह इंजन ट्रकों को कॉर्नवाल में उस खान के चारों ओर खींचकर ले जाता था जहाँ रिचर्ड काम करता था। 1814 में, एक रेलवे इंजीनियर जॉर्ज स्टीफेनसन (1781-1848) ने एक रेल इंजन बनाया जिसे 'ब्लचर' (The Blutcher) कहा जाता था। यह इंजन 30 टन भार 4 मील प्रति घंटे की रफ़्तार से एक पहाड़ी पर ले जा सकता था। सर्वप्रथम 1825 में स्टॉकटन और डार्लिंगटन शहरों के बीच 9 मील लंबा रेलमार्ग 24 किलोमीटर प्रति घंटा (15 मील प्रति घंटा) की रफ़्तार से 2 घंटे में रेल द्वारा तय किया गया। इसके बाद 1830 में लिवरपूल और मैनचेस्टर को आपस में रेलमार्ग से जोड़ दिया गया। 20 वर्षों के भीतर, रेल का 30 से 50 मील प्रति घंटे की रफ़्तार से दौड़ना एक आम बात हो गई।

1830 के दशक में, नहरों के रास्ते परिवहन में अनेक समस्याएँ दिखाई दीं। नहरों के कुछ हिस्सों में जलपोतों की भीड़भाड़ के कारण परिवहन की रफ़्तार धीमी पड़ गई और पाले, बाढ़ या सूखे के कारण उनके इस्तेमाल का समय भी सीमित हो गया। अब रेलमार्ग ही परिवहन का सुविधाजनक विकल्प दिखाई देने लगा। 1830 से 1850 के बीच, ब्रिटेन में रेल पथ कुल मिलाकर दो चरणों में लगभग 6,000 मील लंबा हो गया। 1833-37 के 'छोटे रेलोन्माद' के दौरान, 1400 मील लंबी रेल लाइन बनी और 1844-47 के 'बड़े रेल उन्माद' के दौरान फिर 9,500 मील लंबी रेल लाइन बनाने की मंज़ूरी दी गई। इस संपूर्ण कार्य में कोयले और लोहे का भारी मात्रा में उपयोग किया गया, बड़ी संख्या में लोगों को काम पर लगाया गया और निर्माण तथा लोक कार्य उद्योगों के क्रियाकलापों में तेज़ी लाई गई। 1850 तक आते-आते, अधिकांश इंग्लैंड रेलमार्ग से जुड़ गया।

आविष्कारक कौन थे?

यह पता लगाना अवश्य ही रुचिकर होगा कि वे लोग कौन थे जिनके प्रयत्नों से ये परिवर्तन हुए। उनमें से कुछ लोग प्रशिक्षित वैज्ञानिक थे। भौतिकी तथा रसायन जैसे बुनियादी विज्ञानों की शिक्षा उन्नीसवीं सदी के आखिरी दशकों तक अत्यंत सीमित थी, और ऊपर बताए गए प्रौद्योगिकीय आविष्कार तब तक हो चुके थे। चूंकि इन आविष्कारों को संपन्न करने के लिए भौतिकी या रसायन विज्ञान के उन सिद्धांतों या नियमों की पूर्ण जानकारी होना ज़रूरी नहीं था जिन पर ये आविष्कार आधारित थे इसलिए ये वैज्ञानिक प्रगतियाँ प्रतिभाशाली लेकिन अंत:प्रज्ञ विचारकों तथा लगनशील प्रयोगकर्ताओं द्वारा की गईं। उन्हें इस तथ्य से भी सहायता मिली कि इंग्लैंड में कुछ ऐसी विशिष्टताएँ थीं जो अन्य यूरोपीय देशों में नहीं थीं। इंग्लैंड में, 1760 से 1800 के बीच दर्जनों वैज्ञानिक पत्रिकाएँ और अनेक वैज्ञानिक संस्थाओं द्वारा अनेक शोधपत्र प्रकाशित किए गए। यहाँ तक कि वहाँ छोटे कस्बों में भी ज्ञान-पिपासा सर्वत्र व्याप्त थी। इस प्यास को 'कला-समाज' (सोसाइटी ऑफ आर्ट्स, 1754 में स्थापित) के क्रियाकलापों द्वारा, घूमने-फिरने वाले व्याख्याताओं द्वारा अथवा उन कॉफ़ी हाउसों में जिनकी संख्या अठारहवीं शताब्दी में कई गुना बढ़ गई थी, विचार-विनिमय द्वारा बुझाया गया।

अधिकतर आविष्कार वैज्ञानिक ज्ञान के अनुप्रयोग की अपेक्षा दृढ़ता, रुचि, जिज्ञासा, यहाँ तक कि भाग्य के बल पर ही हुए। कपास उद्योग क्षेत्र के कुछ आविष्कारक, जैसे जॉन के तथा जेम्स हरग्रीव्ज़, बुनाई और बढ़ईगीरी से परिचित थे। किंतु रिचर्ड आर्कराइट एक नाई और बालों की विग बनाने वाला था, सैम्युअल क्रॉम्पटन तकनीकी दृष्टि से कुशल नहीं था, और एडमंड कार्टराइट ने साहित्य, आयुर्विज्ञान और कृषि का अध्ययन किया था, प्रारंभ में उसकी इच्छा पादरी बनने की थी और वह यांत्रिकी के बारे में बहुत कम जानता था।

इसके विपरीत, भाप के इंजनों के क्षेत्र में, थॉमस सेवरी एक सेना अधिकारी था, थॉमस न्यूकोमेन एक लुहार तथा तालासाज़ था और जेम्स वॉट का यंत्र संबंधी कामकाज की ओर बहुत झुकाव था। उन सबमें अपने-अपने आविष्कार के प्रति कुछ संगत ज्ञान अवश्य था। सड़क-निर्माता जॉन मेटकॉफ जिसने स्वयं व्यक्तिगत रूप से सड़कों की सतहों का सर्वेक्षण किया था और उनके बारे में योजना बनाई थी, अंधा था। नहर-निर्माता जेम्स ब्रिंडले तो लगभग निरक्षर था, शब्दों की वर्तनी के बारे में उसका ज्ञान इतना कमज़ोर था कि वह 'नौ चालन' (Navigation) शब्द की सही वर्तनी कभी न बता सका; लेकिन उसमें गज़ब की स्मरण शक्ति, कल्पना शक्ति और एकाग्रता थी।

परिवर्तित जीवन

इसलिए इन वर्षों के दौरान, प्रतिभाशाली व्यक्तियों के लिए क्रांतिकारी परिवर्तन लाना संभव हो पाया। इसी प्रकार, ऐसे धनवान लोग भी बहुत थे जिन्होंने जोखिम उठाकर उद्योग-धंधों में इस आशा से पूंजी-निवेश किया कि इससे उन्हें मुनाफ़ा होगा और उनके धन में कई गुना वृद्धि हो जाएगी। अधिकांश मामलों में यह धनराशि यानी पूँजी कई गुना बढ़ी। धन में, माल, आय, सेवाओं, ज्ञान और उत्पादक कुशलता के रूप में अचानक वृद्धि हुई। लेकिन इसका मनुष्यों को दूसरे रूप में भारी खामियाज़ा भी उठाना पड़ा। इससे परिवार टूट गए। पुराने पते बदल गए और लोगों को नयी जगहों पर रहना पड़ा। शहर विकृत होने लगे और कारखानों में काम करने की परिस्थितियाँ एकदम बिगड़ गईं। इंग्लैंड में 50,000 से अधिक की आबादी वाले नगरों की संख्या 1750 में केवल दो थीं जो बढ़ते-बढ़ते 1850 में 29 हो गई। आबादी में जिस रफ़्तार से बढ़ोतरी हुई उस रफ़्तार से रहन-सहन के अन्य साधनों में वृद्धि नहीं हो पाई। वहाँ रहने के लिए पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी। सफ़ाई और स्वच्छ पेय-जल की व्यवस्था में भी बढ़ती हुई शहरी आबादी के मुताबिक सुधार नहीं हुआ। बाहर

दूर बाईं ओर: कोलब्रुकडेल में बढ़ई और अन्य कामगारों के लिए 1783 में कंपनी द्वारा बनवाए गए आवास। बाईं ओर: डर्बी परिवार के बंगले। विलियम वेस्टवुड द्वारा चित्रित, 1835।

से आकर नए बसे लोगों को नगरों में कारखानों के आसपास भीड़भाड़ वाली गंदी बस्तियों में रहना पड़ा, जबकि धनवान लोग नगर छोड़कर आसपास के उपनगरों में साफ़-सुथरे मकान बनाकर रहने लगे, जहाँ की हवा स्वच्छ थी और पीने का पानी भी साफ एवं सुरक्षित था।

एडवर्ड कार्पेंटर ने 1881 के आसपास अपनी कविता 'एक विनिर्माणकारी नगर में' (इन ए मैन्यूफैक्चरिंग टाउन) में इस स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया था:

"जब मैं उस उदास शहर में बेचैन और निराश घूम रहा था, तो मैंने वहाँ अफ़रातफ़री में परेशान लोग देखे जो मानो नरक के किसी दरवाज़े (हेड्स)* में भूतों की तरह आ-जा रहे थे-

मैंने आकाश में ऊँची उठी चिमनियों की लंबी कतारें देखीं और देखे काले धुएँ के बादल जो सूरज, आकाश और धरती को अपने बोझ से ढक रहे थे-

और देखे कूड़े के बड़े-बड़े ढेर जिनपर बच्चे रद्दी बटोर रहे थे,

और फिर आधी छतों वाले काले, भद्दे मकान और देखी नीचे बहती काली नदी-

जब मैं इन सबको देख रहा था तभी मेरी नज़र दूरदराज़ के पूँजीपति मुहल्ले पर पड़ी जहाँ महलनुमा मकान-बंगले, ऊँची-ऊँची दीवारों वाले बगीचे, सुंदरसलोनी गाड़ियाँ और उनके मालिक मानो दूर-दूर तक पसरी गरीबी, जिसकी बदौलत वे धनवान बने थे, देखकर अपना मुँह बिचका रहे थे...

यह सब देखकर मेरी तो रूह ही काँप उठी।"

**नरक के द्वार।*

मज़दूर

1842 में किए गए एक सर्वेक्षण से यह पता चला कि वेतनभोगी मज़दूरों यानी कामगारों के जीवन की औसत अवधि शहरों में रहने वाले अन्य किसी भी सामाजिक समूह के जीवनकाल से कम थी: बर्मिंघम में यह 15 वर्ष, मैनचेस्टर में 17 वर्ष, डर्बी में 21 वर्ष थी। नए औद्योगिक नगरों में गाँव से आकर रहने वाले लोग ग्रामीण लोगों की तुलना में काफी छोटी आयु में मर जाते थे। वहाँ पैदा होने वाले बच्चों में से आधे तो पाँच साल की आयु प्राप्त करने से पहले ही चल बसते थे। शहरों की आबादी में वृद्धि वहाँ पहले से रह रहे परिवारों में नए पैदा हुए बच्चों से नहीं बल्कि बाहर से आकर बसने वाले नए लोगों से ही होती थी।

मौतें ज़्यादातर उन महामारियों के कारण होती थीं जो जल-प्रदूषण से, जैसे हैज़ा (Cholera) तथा आंत्रशोथ (Typhoid) से और वायु-प्रदूषण से, जैसे क्षयरोग (Tuberculosis) से होती थीं। 1832 में हैज़े का भीषण प्रकोप हुआ जिसमें 31,000 से अधिक लोग काल के गर्त में समा गए। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों तक स्थिति यह थी कि नगर-प्राधिकारी जीवन की इन भयंकर परिस्थितियों की ओर कोई ध्यान नहीं देते थे और इन बीमारियों के निदान और उपचार के बारे में चिकित्सकों या अधिकारियों को कोई जानकारी नहीं थी।

औरतें, बच्चे और औद्योगीकरण

औद्योगिक क्रांति एक ऐसा समय था जब औरतों और बच्चों के काम करने के तरीकों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आए। ग्रामीण गरीबों के बच्चे हमेशा घर में, या खेत में अपने माता-पिता या संबंधियों की निगरानी में तरह-तरह के काम किया करते थे जो समय, दिन या मौसम के अनुसार बदलते रहते थे। इसी प्रकार, गाँवों में औरतें भी खेत के काम में सक्रिय रूप से हिस्सा लेती थीं; वे पशुओं का पालन-पोषण करती थीं, लकड़ियाँ इकट्ठी करती थीं और अपने घरों में चरखे चलाकर सूत कातती थीं।

कारखानों में काम करना इससे बिलकुल अलग किस्म का होता था, वहाँ लगातार कई घंटों तक एक ही तरह का काम कठोर अनुशासन तथा तरह-तरह के दंड की भयावह परिस्थितियों में कराया जाता था।

मर्दों की मज़दूरी मामूली होती थी, उससे अकेले घर का ख़र्च नहीं चल सकता था जिसे पूरा करने के लिए औरतों और बच्चों को भी कुछ कमाना पड़ता था। ज्यों-ज्यों मशीनों का इस्तेमाल बढ़ता गया, काम पूरा करने के लिए मज़दूरों की ज़रूरत कम होती गई। उद्योगपति मर्दों की बजाय औरतों और बच्चों को अपने यहाँ काम पर लगाना अधिक पसंद करते थे क्योंकि एक तो उनकी मज़दूरी कम होती थी और दूसरे वे अपने काम की घटिया परिस्थितियों के बारे में भी कम आंदोलित हुआ करते थे।

स्त्रियों और बच्चों को लंकाशायर और यॉर्कशायर नगरों के सूती कपड़ा उद्योग में बड़ी संख्या में काम पर लगाया जाता था। रेशम, फ़ीते बनाने और बुनने के उद्योग-धंधों में और बर्मिंघम के धातु उद्योगों में (बच्चों के साथ-साथ) औरतों को ही अधिकतर नौकरी दी जाती थी। कपास कातने की जेनी जैसी अनेक मशीनें तो कुछ इसी तरह की बनाई गई थीं कि उनमें बच्चे ही अपनी फुर्तीली उंगलियों और छोटी-सी कद-काठी के कारण आसानी से काम कर सकते थे। बच्चों को अक्सर कपड़ा मिलों में रखा जाता था क्योंकि वहाँ सटाकर रखी गई मशीनों के बीच से छोटे बच्चे आसानी

बर्मिंघम की गिल्ट-बटन फैक्ट्री में काम करती हुई औरत का चित्र। 1850 के दशक में बटनों के निर्माण एवं व्यापार में काम करने वाले कुल मज़दूरों में से दो-तिहाई मज़दूर स्त्रियाँ और बच्चे थे। मर्दों को प्रति सप्ताह 25 शिलिंग मज़दूरी मिलती थी जबकि उतने ही घंटे काम करने के लिए बच्चों को सिर्फ़ एक शिलिंग और औरतों को 7 शिलिंग मज़दूरी दी जाती थी।

से आ-जा सकते थे। बच्चों से कई घंटों तक काम लिया जाता था, यहाँ तक कि उन्हें हर रविवार को भी मशीनें साफ़ करने के लिए काम पर आना पड़ता था, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें ताज़ी हवा खाने या व्यायाम करने का कभी कोई मौका नहीं मिलता था। कई बार तो बच्चों के बाल मशीनों में फँस जाते थे या उनके हाथ कुचल जाते थे; यहाँ तक कि बच्चे काम करते-करते इतने थक जाते थे कि उन्हें नींद की झपकी आ जाती थी और वे मशीनों में गिरकर मौत के मुँह में चले जाते थे।

कोयले की खानें भी काम करने के लिहाज़ से बहुत खतरनाक होती थीं। खानों की छतें धँस जाती थीं अथवा वहाँ विस्फोट हो जाता था, और चोटें लगना तो वहाँ आम बात थी। कोयला खानों के मालिक कोयले के गहरे अंतिम छोरों को देखने के लिए अथवा जहाँ जाने का रास्ता वयस्कों के लिए बहुत संकरा होता था, वहाँ बच्चों को ही भेजते थे। छोटे बच्चों को कोयला खानों में 'ट्रैपर' का काम भी करना पड़ता था। कोयला खानों में जब कोयला भरे डिब्बे इधर-उधर ले जाये जाते थे तो वे आवश्यकतानुसार उन दरवाज़ों को खोलते और बंद करते थे। यहाँ तक कि वे 'कोल बियरर्स' के रूप में अपनी पीठ पर रखकर कोयले का भारी वज़न भी ढोते थे।

कारखानों के मालिक बच्चों से काम लेना बहुत ज़रूरी समझते थे, ताकि वे अभी से काम सीखकर बड़े होकर उनके लिए अच्छा काम कर सकें। ब्रिटिश फैक्ट्रियों के अभिलेखों से प्राप्त साक्ष्यों से पता चलता है कि फैक्ट्री मज़दूरों में से लगभग आधों ने तो वहाँ दस साल से भी कम उम्र में और 28 प्रतिशत मज़दूरों ने वहाँ 14 साल से कम की आयु में काम करना शुरू किया था। औरतों को मज़दूरी मिलने से न केवल वित्तीय स्वतंत्रता मिली बल्कि उनके आत्मसम्मान में भी बढ़ोतरी हुई। लेकिन इससे उन्हें जितना लाभ हुआ उससे कहीं ज़्यादा हानि काम की अपमानजनक परिस्थितियों के कारण हुई। अक्सर उनके बच्चे पैदा होते ही या शैशवावस्था में ही मर जाते थे और उन्हें अपने औद्योगिक काम की वजह से मजबूर होकर शहर की घिनौनी व गंदी बस्तियों में रहना पड़ता था।

लंदन के गरीब मुहल्ले की एक गली, फ्रांसीसी कलाकार डोरे द्वारा उकेरा गया चित्र, 1876।

चार्ल्स डिकन्स (1812-70) औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप गरीबों के लिए जो भयंकर स्थिति उत्पन्न हुई उसका संभवत: सबसे कठोर समकालीन आलोचक थे। उन्होंने अपने उपन्यास *हार्ड टाइम्स* में एक काल्पनिक औद्योगिक नगर 'कोकटाउन' का बड़ा सटीक वर्णन किया है। "यह एक लाल ईंटों से बना नगर था, लेकिन उसकी ईंटों का रंग लाल तभी रह सकता था यदि धुएँ और राख ने उसे पोतकर बदरंग न कर दिया होता; लेकिन हालत यह थी कि यह कस्बा अजीब लाल और काले रंग के मिश्रण से पुता था मानो वह किसी खूंखार आदमी का चेहरा हो। यह मशीनों और उन लंबी गगनचुंबी चिमनियों का शहर था जिनमें से धुएँ के साँपों की अटूट पंक्तियाँ कभी कुंडलित न होकर, लगातार निकलती रहती थीं। इस नगर मे एक काली नहर थी और एक नदी भी थी जिसका पानी बदबूदार रंजक गंदगी से भरकर बैंगनी रंग का हो गया था। वहाँ ढेरों इमारतें थीं जो उनके भीतर चलने वाली मशीनों के कारण हरदम काँपती रहती थीं और उनकी खिड़कियाँ हमेशा ही खड़कती रहती थीं और वहाँ भाप के इंजन का पिस्टन उकताहट के साथ ऊपर-नीचे होता रहता था, मानो किसी हाथी का सिर हो जो अपने दु:खभरे पागलपन में आँखे फाड़े एक ही ओर देख रहा हो।"

क्रियाकलाप 3

औद्योगीकरण के प्रारंभ में ब्रिटिश शहरों और गाँवों पर पड़ने वाले प्रभावों पर विचार करें और इसकी तुलना ठीक उसी प्रकार की परिस्थितियों में भारत के संदर्भ में करें।

ब्रिटेन के निबंधकार और उपन्यासकार डी.एच. लॉरेन्स ने (1885-1930), डिकेन्स के सत्तर साल बाद, कोयला क्षेत्र में स्थित एक गाँव में आए ऐसे परिवर्तन का इस प्रकार वर्णन किया जिसे उन्होंने स्वयं अनुभव नहीं किया था, लेकिन जिसके बारे में उन्होंने अपने बड़े-बुज़ुर्गों से सुना था।

"ईस्टवुड... उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में अवश्य ही एक छोटा गाँव रहा होगा जहाँ छोटी-छोटी झोपड़ियाँ थीं, खान मजदूरों के चार कमरों वाले छोटे-छोटे घरों की छिटपुट कतारें थीं और पुराने खान मालिकों के आवास थे... लेकिन 1820 के आसपास किसी समय कंपनी ने पहला बड़ा शैफ़्ट लगाया होगा... और औद्योगिक कोयला खान की पहली वास्तविक मशीनरी लगाई... मज़दूरों के रहने के छोटे-छोटे घरों की कतारें अधिकतर गिरा दी गईं और फिर नाटिंघम रोड के साथ-साथ छोटी-छोटी दुकानें खुलने लगीं और नीचे ढलान में कंपनी ने कुछ इमारतें बनाईं जिन्हें आज भी 'नयी इमारतें' कहा जाता है... भट्ठी, काली गली में खुलने वाली छोटे-छोटे चार कमरों वाले घरों की कतारें जिनकी पीठ चौकोर निर्जन स्थल की ओर थी, बेरकों के बाड़े की तरह बंद कर दी गईं, बड़ा अजीब लगता है यह सब।"

विरोध आंदोलन

औद्योगीकरण के प्रारंभिक दशकों का समय वही था जब फ्रांसीसी क्रांति (1789-94) द्वारा उद्भूत नए-नए राजनीतिक विचारों का प्रचार-प्रसार हो रहा था। 'स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व' स्थापित करने के आंदोलनों ने यह दिखा दिया कि सामूहिक जन आंदोलन चलाना संभव है। इनसे 1790 के दशक की फ्रांसीसी संसदीय सभाओं जैसी लोकतांत्रिक संस्थाएँ बनाई जा सकती हैं और रोटी जैसी आवश्यक वस्तुओं की कीमतों को नियंत्रित करके युद्ध की कठिनाइयों को भी रोका जा सकता है। इंग्लैंड में, फैक्ट्रियों में काम करने की कठोर परिस्थितियों के विरुद्ध राजनीतिक विरोध बढ़ता जा रहा था और श्रमजीवी लोग मताधिकार प्राप्त करने के लिए आंदोलन कर रहे थे। इसकी प्रतिक्रिया में, सरकार ने दमनकारी रुख अपनाया और कानून बनाकर, लोगों से विरोध प्रदर्शन करने का अधिकार ही छीन लिया।

इंग्लैंड का फ्रांस के साथ लंबे अरसे (1792 से 1815) तक युद्ध चलता रहा। इंग्लैंड और यूरोप के बीच चलने वाला व्यापार छिन्न-भिन्न हो गया। फैक्ट्रियों को मजबूरन बंद करना पड़ा, बेरोज़गारी में बढ़ोतरी हुई और रोटी, मांस जैसे आवश्यक खाद्य पदार्थों की कीमतें औसत मजदूरी स्तर से कहीं ज़्यादा बढ़ गईं।

ब्रिटेन की संसद ने 1795 में दो जुड़वाँ अधिनियम पारित किए, जिनके अंतर्गत 'लोगों को भाषण या लेखन द्वारा सम्राट, संविधान, या सरकार के विरुद्ध घृणा या अपमान करने के लिए उकसाना' अवैध घोषित कर दिया गया और 50 से अधिक लोगों की अनधिकृत सार्वजनिक बैठकों पर रोक लगा दी गई। लेकिन 'पुराने भ्रष्टाचार' (Old Corruption) के विरुद्ध आंदोलन बराबर चलता रहा। 'पुराना भ्रष्टाचार' शब्द का प्रयोग राजतंत्र और संसद के संबंध में किया जाता था। संसद के सदस्य जिनमें भू-स्वामी, उत्पादक तथा पेशेवर लोग शामिल थे, कामगारों को वोट का अधिकार दिए जाने के खिलाफ़ थे। उन्होंने 'कार्न लॉज़' (अनाज के कानून) का समर्थन किया। इस कानून के अंतर्गत विदेश से सस्ते अनाज के आयात पर रोक लगा दी गई थी जब तक कि ब्रिटेन में इन अनाजों की कीमत में एक स्वीकृत स्तर तक वृद्धि न हो गई हो।

जैसे-जैसे श्रमिकों की तादाद शहरों और कारखानों में बढ़ी, वे अपने गुस्से और हताशा को हर तरह के विरोध में प्रकट करने लगे। 1790 के दशक से पूरे देश भर में ब्रैड अथवा खाद्य के लिए

दंगे होने लगे। गरीबों का मुख्य आहार ब्रैड ही था और इसकी कीमत पर ही उनके रहन-सहन का स्तर निर्भर करता था। ब्रैड के भंडारों पर कब्जा कर लिया गया और उन्हें मुनाफ़ाखोरों द्वारा लगाई गई ऊँची कीमतों से काफ़ी कम मूल्य में बेचा जाने लगा जो आम आदमी के लिए वाजिब थीं और नैतिक दृष्टि से भी सही थीं। ऐसे दंगे ख़ासतौर पर युद्ध के बदतरीन वर्ष (1795) में बार-बार हुए, लेकिन उनका सिलसिला 1840 के दशक तक चलता रहा।

परेशानी का एक कारण और भी था जिसे चकबंदी या बाड़ा पद्धति कहते हैं, जिसके द्वारा 1770 के दशक से छोटे-छोटे सैकड़ों फार्म (खेत) शक्तिशाली ज़मींदारों के बड़े फार्मों में मिला दिए गए। इस पद्धति से बुरी तरह से प्रभावित हुए गरीब परिवारों ने औद्योगिक काम देने की मांग की। लेकिन कपड़ा उद्योग में मशीनों के प्रचलन से हज़ारों की संख्या में हथकरघा बुनकर बेरोजगार होकर गरीबी की मार झेलने को मजबूर हो गए, क्योंकि उनका करघा मशीनों का मुकाबला नहीं कर सकता था। 1790 के दशक से बुनकर लोग अपने लिए न्यूनतम वैध मजदूरी की माँग करने लगे। संसद ने इस माँग को ठुकरा दिया। जब वे हड़ताल पर चले गए तो उन्हें जबरदस्ती तितर-बितर कर दिया गया। हताश होकर सूती कपड़े के बुनकरों ने लंकाशायर में पावरलूमों को नष्ट कर दिया क्योंकि वे समझते थे कि इन बिजली के करघों ने ही उनकी रोजी-रोटी छीनी है। नोटिंघम में ऊनी कपड़ा उद्योग में भी मशीनों के चलन का प्रतिरोध किया गया, इसी प्रकार लैसेस्टरशायर (Leicestershire) और डर्बीशायर (Derbyshire) में भी विरोध प्रदर्शन हुए।

यार्कशायर (Yorkshire) में, ऊन कतरने वालों ने ऊन कतरने के ढाँचों (शीयरिंग फ्रेम) को तोड़ दिया। ये लोग परंपरागत रूप से अपने हाथों से भेड़ों के बालों की कटाई करते थे। 1830 के दंगों में फार्मों में काम करने वाले श्रमिकों को भी लगा कि उनका धंधा तो चौपट होने वाला है क्योंकि खेती में भूसी से दाना अलग करने के लिए नयी खलिहानी मशीनों (थ्रेशिंग मशीन) का इस्तेमाल शुरू हो गया था। दंगाइयों ने इन मशीनों को तोड़ डाला। परिणामस्वरूप नौ दंगाइयों को फाँसी की सजा हुई और 450 लोगों को कैदियों के रूप में आस्ट्रेलिया भेज दिया गया। (देखिए विषय 10)

एक करिश्माई व्यक्तित्व वाले जनरल नेड लुड के नेतृत्व में लुडिज्म (1811-17) नामक अन्य आंदोलन चलाया गया। यह एक अन्य किस्म के विरोध प्रदर्शन का उदाहरण था। लुडिज्म के अनुयायी मशीनों की तोड़फोड़ में ही विश्वास नहीं करते थे, बल्कि न्यूनतम मजदूरी, नारी एवं बाल श्रम पर नियंत्रण, मशीनों के आविष्कार से बेरोजगार हुए लोगों के लिए काम और कानूनी तौर पर अपनी माँगें पेश करने के लिए मजदूर संघ (ट्रेड यूनियन) बनाने के अधिकार की भी माँग करते थे।

औद्योगीकरण के प्रारंभिक वर्षों में श्रमजीवियों के पास उन कठोर कार्यवाहियों, जिनसे उनके जीवन में फ़ेरबदल हो रही थी, के खिलाफ़ अपना गुस्सा जाहिर करने के लिए न तो वोट देने का अधिकार था और न ही कोई कानूनी तरीका। अगस्त 1819 में 80,000 लोग अपने लिए लोकतांत्रिक अधिकारों, अर्थात् राजनीतिक संगठन बनाने, सार्वजनिक सभाएँ करने और प्रेस की स्वतंत्रता के अधिकारों की मांग करने के लिए मैनचेस्टर में सेंट पीटर्स (St. Peter's Field) मैदान में शांतिपूर्वक इकट्ठे हुए। लेकिन उनका बर्बरतापूर्वक दमन कर दिया गया। इसे पीटर लू* के नरसंहार (Peterloo Massacre) के नाम से जाना जाता है। उन्होंने जिन अधिकारों की माँग की थी उन्हें उसी वर्ष संसद द्वारा पारित छः अधिनियमों द्वारा नकार दिया गया। इन अधिनियमों के द्वारा उन राजनीतिक कार्यकलापों पर रोक बढ़ा दी गई। इस रोक की शुरुआत 1795 के दो जुड़वाँ अधिनियमों के तहत की गई थी। परन्तु इससे कुछ लाभ भी हुए। पीटर लू के बाद ब्रिटिश संसद के निचले सदन 'हाउस ऑफ कॉमन्स' को अधिक प्रतिनिधित्वकारी बनाए जाने की आवश्यकता उदारवादी राजनीतिक दलों द्वारा महसूस की गई और जुड़वाँ अधिनियमों को 1824-25 में निरस्त कर दिया गया।

*इस शब्द को वाटर लू शब्द से मेल खाते हुए बनाया गया था। 1815 में वाटर लू में फ्रांसीसी सेना पराजित हुई।

कानूनों के जरिये सुधार

सरकार औरतों और बच्चों के काम की परिस्थितियों के प्रति कितनी जागरूक थी? 1819 में कुछ कानून बनाए गए जिनके तहत नौ वर्ष से कम की आयु वाले बच्चों से फैक्ट्रियों में काम करवाने पर पाबंदी लगा दी गई और नौ से सोलह वर्ष की आयु वाले बच्चों से काम कराने की सीमा 12 घंटे तक सीमित कर दी गई लेकिन इस कानून में इसका प्रवर्तन यानी पालन कराने के लिए आवश्यक अधिकारों की व्यवस्था नहीं की गई थी। संपूर्ण उत्तरी इंग्लैंड में कामगारों द्वारा इस स्थिति का भारी विरोध किए जाने के बाद, 1833 में एक अधिनियम पारित किया गया जिसके अंतर्गत नौ वर्ष से कम आयु वाले बच्चों को केवल रेशम की फैक्ट्रियों में काम पर लगाने की अनुमति दी गई, बड़े बच्चों के लिए काम के घंटे सीमित कर दिए गए और कुछ फैक्ट्री निरीक्षकों की व्यवस्था कर दी गई जिससे कि अधिनियम के प्रवर्तन तथा पालन को सुनिश्चित किया जा सके। अंततः 1847 में, 30 वर्ष से भी अधिक लंबे अरसे तक आंदोलन चलने के बाद, दस घंटा विधेयक पारित कर दिया गया। इस कानून ने स्त्रियों और युवकों के लिए काम के घंटे सीमित कर दिए और पुरुष श्रमिकों के लिए 10 घंटे का दिन निश्चित कर दिया।

ये अधिनियम कपड़ा उद्योगों पर ही लागू होते थे, खनन उद्योग पर नहीं। सरकार द्वारा स्थापित, 1842 के खान आयोग ने यह उजागर कर दिया कि खानों में काम करने की परिस्थितियाँ वास्तव में, 1833 के अधिनियम के लागू होने से पहले कहीं अधिक खराब हो गई हैं, क्योंकि पहले से अधिक संख्या में बच्चों को कोयला खानों में काम पर लगाया जा रहा था। 1842 के खान और कोयला खान अधिनियम ने दस वर्ष से कम आयु के बच्चों और स्त्रियों से खानों में नीचे काम लेने पर पाबंदी लगा दी। फील्डर्स फैक्ट्री अधिनियम ने 1847 में यह कानून बना दिया कि अठारह साल से कम उम्र के बच्चों और स्त्रियों से 10 घंटे प्रतिदिन से अधिक काम न लिया जाए। इन कानूनों का प्रवर्तन फैक्ट्री निरीक्षकों के द्वारा किया जाना था, लेकिन यह एक कठिन काम था। निरीक्षकों का वेतन बहुत कम था और प्रबंधक उन्हें रिश्वत देकर आसानी से उनका मुँह बंद कर देते थे। दूसरी ओर, बच्चों के माता-पिता भी उनकी आयु के बारे में झूठ बोलकर उन्हें काम पर लगवा देते थे, ताकि उनकी मजदूरी से घर का खर्च चलाने में सहायता मिले।

क्रियाकलाप 4

उद्योगों में काम की परिस्थितियों के बारे में बनाए गए सरकारी विनियमों के पक्ष और विपक्ष में अपनी दलीलें दें।

औद्योगिक क्रांति के विषय में तर्क-वितर्क

1970 के दशक तक, इतिहासकार 'औद्योगिक क्रांति' शब्द का प्रयोग ब्रिटेन में 1780 के दशक से 1820 के दशक के बीच हुए औद्योगिकी विकास व विस्तारों के लिए करते थे। लेकिन उसके बाद इस शब्द के प्रयोग को अनेक आधार पर चुनौती दी जाने लगी।

दरअसल औद्योगीकरण की क्रिया इतनी धीमी गति से होती रही कि इसे 'क्रांति' कहना ठीक नहीं होगा। इसके द्वारा पहले से मौजूद प्रक्रियाओं को ही आगे नए स्तरों तक लाया गया। इस प्रकार, फैक्ट्रियों में श्रमिकों का जमावड़ा पहले की अपेक्षा अधिक हो गया और धन का प्रयोग भी पहले से अधिक व्यापक रूप से होने लगा।

उन्नीसवीं शताब्दी शुरू होने के काफी समय बाद तक भी इंग्लैंड के बड़े-बड़े क्षेत्रों में कोई फैक्ट्रियाँ या खानें नहीं थीं, इसलिए 'औद्योगिक क्रांति' शब्द 'अनुपयुक्त' समझा गया। इंग्लैंड में परिवर्तन क्षेत्रीय तरीके से हुआ, प्रमुख रूप से लंदन, मैनचेस्टर, बर्मिंघम (Birmingham) या न्यूकासल (Newcastle) नगरों के चारों ओर न कि संपूर्ण देश में।

क्या कपास या लोहा उद्योगों में अथवा विदेशी व्यापार में 1780 के दशक से 1820 के दशक तक हुए विकास या संवृद्धि को क्रांतिकारी कहा जा सकता है? नयी मशीनों के कारण सूती कपड़ा उद्योग में जो ध्यानाकर्षणकारी संवृद्धि हुई वह भी एक ऐसे कच्चे माल (कपास) पर आधारित थी जो ब्रिटेन में बाहर से मँगाया जाता था और तैयार माल भी दूसरे देशों में (विशेषत: भारत में) बेचा जाता था। धातु से बनी मशीनें और भाप की शक्ति तो उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक दुर्लभ रहीं। ब्रिटेन के आयात और निर्यात में 1780 के दशक से जो तेज़ी से वृद्धि हुई उसका कारण यह था कि अमरीकी स्वतंत्रता संग्राम के कारण उत्तरी अमरीका के साथ जो व्यापार बाधित हो गया था वह फिर से शुरू हो गया। इस वृद्धि को तीव्र कहकर अंकित किया गया क्योंकि जिस बिन्दु से उसका प्रारंभ हुआ था वह काफी नीचे था।

आर्थिक परिवर्तनों के सूचकांक यह दर्शाते हैं कि सतत् औद्योगीकरण 1815-20 से पहले की बजाय बाद में दिखाई दिया था। 1793 के बाद के दशकों में फ्रांसीसी क्रांति और नेपोलियन के युद्धों के विघटनकारी प्रभावों का अनुभव किया गया था। औद्योगीकरण को देश के धन के पूँजी निर्माण में या आधारभूत ढाँचा तैयार करने में अथवा नयी-नयी मशीनें लगाने के लिए अधिकाधिक निवेश करने में इन सुविधाओं के कुशलतापूर्ण उपयोग के स्तरों को बढ़ाने और उत्पादकता में वृद्धि करने के साथ जोड़ा जाता है। यानि लाभदायक निवेश इन मायनों में उत्पादकता के स्तरों के साथ-साथ 1820 के बाद धीरे-धीरे बढ़ने लगा। 1840 के दशक तक कपास, लोहा और इंजीनियरिंग उद्योगों से आधे से भी कम औद्योगिक उत्पादन होता था। तकनीकी प्रगति इन्हीं शाखाओं तक ही सीमित नहीं थी; बल्कि वह कृषि-संसाधन तथा मिट्टी के बर्तन बनाने (पौटरी) जैसे अन्य उद्योग-धंधों में भी देखी जा सकती थी।

ब्रिटेन में औद्योगिक विकास 1815 से पहले की अपेक्षा उसके बाद अधिक तेजी से क्यों हुआ? इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ने के लिए इतिहासकारों ने इस तथ्य की ओर इशारा किया है कि 1760 के दशक से 1815 तक ब्रिटेन ने एक साथ दो काम करने की कोशिश की– पहला औद्योगिकरण और दूसरा यूरोप, उत्तरी अमरीका और भारत में युद्ध लड़ना; और शायद वह उनमें से एक काम में असफल रहा। ब्रिटेन 1760 के बाद अगले 60 वर्षों में से 36 वर्ष तक लड़ाई में व्यस्त रहा। जो पूंजी निवेश के लिए उधार ली गई थी वह युद्ध लड़ने में खर्च की गई। यहाँ तक कि युद्ध का 35 प्रतिशत तक खर्च लोगों की आमदनियों पर कर लगाकर पूरा किया जाता था। कामगारों और श्रमिकों को कारखानों तथा खेतों में से निकालकर सेना में भर्ती कर दिया जाता था। खाद्य सामग्रियों की कीमतें तो इतनी तेज़ी से बढ़ीं कि गरीबों के पास अपनी उपभोक्ता सामग्री खरीदने के लिए भी बहुत कम पैसा बचता था। नेपोलियन की नाकाबंदी की नीति और ब्रिटेन द्वारा उसे नाकाम करने की कोशिशों ने यूरोप महाद्वीप को व्यापारिक दृष्टि से अवरुद्ध कर दिया। इससे ब्रिटेन से निर्यात होने वाले अधिकांश लक्ष्यस्थल ब्रिटेन के व्यापारियों की पहुँच से बाहर हो गए।

'क्रांति' के साथ प्रयुक्त 'औद्योगिक' शब्द अर्थ की दृष्टि से बहुत सीमित है। इस दौरान जो रूपांतरण हुआ वह आर्थिक तथा औद्योगिक क्षेत्रों तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि उसका विस्तार इन क्षेत्रों से परे तथा समाज के भीतर भी हुआ और इसके फलस्वरूप दो वर्गों को प्रधानता मिली: पहला था बुर्जुआ वर्ग यानी मध्यम वर्ग और दूसरा था नगरों और देहाती इलाकों में रहने वाला मजदूरों का सर्वहारा वर्ग।

1851 में लंदन में विशेष रूप से निर्मित स्फटिक प्रासाद (क्रिस्टल पैलेस) में ब्रिटिश उद्योग की उपलब्धियों को दर्शाने के लिए एक विशाल प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसे देखने

1851 की महान प्रदर्शनी ने सभी राष्ट्रों की औद्योगिक उपलब्धियों, विशेष रूप से ब्रिटेन की उल्लेखनीय प्रगति की झाँकी प्रस्तुत की। यह प्रदर्शनी लंदन के हाइड पार्क में स्थित क्रिस्टल पैलेस में लगाई गई थी। यह पैलेस विशेष रूप से इसी प्रयोजन के लिए बर्मिंघम में उत्पादित लोहे फलकों में जड़ी शीशे की चादरों से बनाया गया था

के लिए दर्शकों की भारी भीड़ उमड़ पड़ी। उस समय देश की आधी जनसंख्या शहरों में रहती थी, लेकिन शहरों में रहने वाले कामगारों में से जितने लोग हस्तशिल्प की इकाइयों में काम करते थे, लगभग उतने ही फैक्ट्रियों या कारखानों में कार्यरत थे। 1850 के दशक से, शहरी इलाकों में रहने वाले लोगों का अनुपात अचानक बढ़ गया, और उनमें से अधिकांश लोग उद्योगों में काम करते थे, यानी वे श्रमजीवी वर्ग के थे। अब ब्रिटेन के समूचे कार्य-बल का केवल 20 प्रतिशत भाग ही देहाती इलाकों में रहता था। औद्योगीकरण की यह रफ्तार अन्य यूरोपीय देशों में हो रहे औद्योगीकरण के मुकाबले बहुत ज्यादा तेज़ थी। ब्रिटिश उद्योग के विस्तृत अध्ययन में इतिहासकार ए.ई. मस्सन ने कहा है कि "1850 से 1914 तक की अवधि को एक ऐसा काल मानने के लिए पर्याप्त आधार हैं जिसमें औद्योगिक क्रांति वास्तव में अत्यंत व्यापक पैमाने पर हुई, जिससे संपूर्ण अर्थव्यवस्था और समाज की कायापलट, अन्य किसी भी परिवर्तन के मुकाबले बड़ी तेज़ी से और व्यापक रूप से हुआ था।"

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. ब्रिटेन 1793 से 1815 तक कई युद्धों में लिप्त रहा, इसका ब्रिटेन के उद्योगों पर क्या प्रभाव पड़ा?
2. नहर और रेलवे परिवहन के सापेक्षिक लाभ क्या-क्या हैं?
3. इस अवधि में किए गए 'आविष्कारों' की दिलचस्प विशेषताएँ क्या थीं?
4. बताइए कि ब्रिटेन के औद्योगीकरण के स्वरूप पर कच्चे माल की आपूर्ति का क्या प्रभाव पड़ा?

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. ब्रिटेन में स्त्रियों के भिन्न-भिन्न वर्गों के जीवन पर औद्योगिक क्रांति का क्या प्रभाव पड़ा?
6. विश्व के भिन्न-भिन्न देशों में रेलवे आ जाने से वहाँ के जनजीवन पर क्या प्रभाव पड़ा? तुलनात्मक विवेचना कीजिए।